A Pratibha Spandan's Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

तबला की उत्पत्ति, विकास और प्रभाव

Shivansh[1], Dr. Kulwinder Singh[2]

1 Research Scholar, School of Liberal and Creative Arts, Lovely Professional University, Jalandhar, Punjab, India
2 Associate Professor, School of Liberal and Creative Arts, Lovely Professional University, Jalandhar, Punjab, India

OPEN ACCESS

सार

तबला भारतीय संगीत का एक आवश्यक ताल वाद्य है, इसका इतिहास जटिल और बहुआयामी है। अवनध वाद्य के रूप में, इसका गहरा सांस्कृतिक महत्व है और यह भारतीय संगीत की सदियों पुरानी विरासत का प्रतीक है। यह शोध पत्र तबला की उत्पत्ति के बारे में विभिन्न सिद्धांतों की जांच करता है, जिसमें भगवान शिव और गणेश के साथ इसके संबंध, त्रिपुष्कर और उर्ध्वक जैसे वाद्य यंत्रों से इसका प्रलेखित विकास और मुगल काल के दौरान संगीत की लोकप्रियता में बदलाव के प्रभाव स्वरूप इसका मध्य युगीन विकास शामिल है। इसके अतिरिक्त, तबला की बनावट और वादन तकनीकों को आकार देने में अमीर खुसरो, भवानी दास और सिधार खां जैसे ऐतिहासिक हस्तियों के प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। इस बात पर जोर दिया गया है कि कैसे तबला लोक परंपराओं से शास्त्रीय संगीत में परिवर्तित हुआ, जो संरक्षण, क्षेत्रीय शैलियों और कलात्मक प्राथमिकताओं में बदलाव को दर्शाता है। यह अध्ययन प्राचीन समाज से अब तक कि तबले की यात्रा पर प्रकाश डालता है, जहां यह मृदंग जैसे वाद्य यंत्रों के साथ मौजूद था, तथा अंततः ख्याल और ठुमरी शैलियों में इसकी प्रमुखता तक पहुंचा, जिसने भारतीय शास्त्रीय और उपशास्त्रीय संगीत में नई लयबद्ध अभिव्यक्तियों को उत्प्रेरित किया।

मूल शब्द: *तबला, भारतीय संगीत, ताल वाद्य, तबला उत्पत्ति, पखावज, उर्ध्वक, आलिंग्य*

परिचय

तबला आधुनिक युग के भारतीय संगीत में सबसे अधिक प्रयुक्त होने वाला अवनध वाद्य है। कुछ विद्वानों का कहना है कि भारत में तबला प्राचीन काल से ही विद्यमान था, जिसका आविष्कार संभवतः त्रिपुष्कर, मृदंग या दुंदुभि के आधार पर हुआ होगा[5]। तबले की चर्चा कहीं त्रिपुष्कर, कहीं उर्ध्वक और आलिंग्य, कहीं मृदंग और तब्ल, तबल या तबला के नाम से की गई है।[4] संगीतज्ञ ठाकुर जयदेव सिंह के अनुसार, तबला एक प्राचीन भारतीय लोक वाद्य का परिष्कृत और आधुनिक रूप है। लेकिन 18वीं शताब्दी तक, इसने न तो आज के तबले का रूप प्राप्त किया था और न ही यह बहुत लोकप्रिय था।[4] तबले की उत्पत्ति से संबंधित विभिन्न सिद्धांत और मान्यताएँ हैं, जिनकी चर्चा इस शोध पत्र में की गई है।

प्राचीन काल से संबन्धित मान्यताएँ

एक प्रमुख मान्यता यह है कि पहला ताल वाद्य भगवान शिव ने बनाया था।[8] उनके द्वारा बनाए गए ताल वाद्य को डमरू कहा गया। पाणिनी की 'अष्टाध्यायी' के अनुसार, जब भगवान शिव ने डमरू बजाया, तो इस वाद्य से उत्पन्न ध्वनि ने दिव्य भाषा संस्कृत के सभी अक्षरों को जन्म दिया।[8] भगवान शिव को मृदंग की उत्पत्ति से भी जोड़ा गया, राक्षस त्रिपुरासुर पर विजय पर भगवान शिव द्वारा किए गए नृत्य की संगति करने के लिए ब्रह्मा ने मृदंग नामक अवनध्द वाद्य बनाया।[10] इसी प्रकार एक मान्यता भगवान गणेश के साथ भी जुड़ी हुई है, तारकासुर की मृत्यु के बाद भगवान गणेश ने जमीन में एक गड्ढा खोदा और गड्ढे के मुंह को उसके शरीर की खाल से कसकर मढ दिया और फिर उसे बजाना शुरू कर दिया। ऐसा लगता है कि गणेश जी ही 'भूमि दुंदुभि' नामक वाद्य के आविष्कारक थे जो एक ताल वाद्य है [7] और यह तबले का प्राचीन रूप हो सकता है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार, हस्त प्रहार या आघात से बजाए जाने वाले ताल वाद्यों के निर्माण की विधि के प्रवर्तक स्वाति मुनि थे। तालमय ध्वनि के प्रकृतिजन्य रूप को स्वाति मुनि ने अपने अनुभव एवं विज्ञान के द्वारा आतोद्ययंत्र का रूप दिया। 'नाट्य शास्त्र' के माध्यम से ही हमें पुष्कर, मृदंग और अनेक अवनध वाद्यों की उत्पत्ति के बारे में जानकारी मिलती है।[7] भरत ने विश्वकर्मा की मदद से पुष्कर वाद्य का निर्माण किया और दुंदुभि वाद्य के आधार पर मिट्टी से तीन वाद्य आंकिक, उर्ध्वक और आलिंग्य बनाए। त्रिपुष्कर को मृदंग, मर्दल जैसे कई नामों से जाना जाता था[5], ऐसा माना जाता है कि तबले का विकास इन्हीं वाद्यों से हुआ होगा।एक मत अनुसार त्रिपुष्कर जो एक वाद्य था, उसे सुविधा के लिए दो भागों में विभाजित कर दिया गया और उर्ध्वक और अलिंग्य यानी सव्यक् (दायाँ) और वामक (बायाँ) को एक वाद्य का और आंकिक को दूसरे का रूप दिया गया। बाद में आंकिक को अलग कर दिया गया और सव्यक् और वामक को निम्न श्रेणी के संगीत से जोड़ दिया गया। [4]

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

नाट्य शास्त्र के युग में अवनध वाद्य मिट्टी से बनाए जाते थे। इसी कारण प्राचीन संगीत समाज में मिट्टी से बने ताल वाद्यों को मृदंग कहने का चलन था।[7] संगीत दर्पण के अनुसार 'मृदा' अर्थात मिट्टी से बना वाद्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता था, अतः भगवान कृष्ण के समकालीन युग में मृदंग का निर्माण लकड़ी से किया जाने लगा।[7] प्रो. सत्यभान शर्मा के अनुसार मृदंग को बाद में काष्ठ से बनाया गया, तब इसका नाम 'पक्षवाद्य' था जो बाद में पखावज हो गया।[7] अतः सम्भावना है कि पहले तबला भी मिट्टी का बनता हो। प्राचीन काल में दो भिन्न ध्वनियों के नगाड़ों का प्रयोग होता था इस में 'सम्बल' नामक एक ताल वाद्य था इसके दो भाग होते थे, नर और मादा। सम्भव है कि आज का तबला सम्बल का ही विकसित रूप हो।[6] एक मान्यता के अनुसार प्राचीन वाद्य दर्दुर का आधुनिक रूप तबला है।[6] कुछ विद्वान मानते हैं कि तबले की उत्पत्ति प्राचीन वाद्य उर्ध्वक से हुई है, किन्तु उर्ध्वक का जो चित्र उपलब्ध है वह तबले जैसा ही है किन्तु उसमें गट्टे नहीं हैं, इस आधार पर कहा जा सकता है कि उर्ध्वक मिट्टी का बना है।[6] पी.बी. हसूरकर का दावा है कि दर्दुर वर्तमान तबले के दाहिने हिस्से जैसा था। इस आधार पर कहा जा सकता है कि तबला संभवतः प्राचीन वाद्य दर्दुर और उर्ध्वक का मिश्रण है।[6]

मध्यकालीन एवं आधुनिक काल की मान्यताएँ

डॉ. आबान ई. मिस्त्री के अनुसार आदिमानव ने विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्रों या दुंदुभि से प्रेरित होकर तबले का आविष्कार किया होगा।[3] ऐसा प्रतीत होता है कि इस तबला वाद्य की वादन क्षमता कम रही होगी, जिसके कारण यह वाद्य लोकप्रिय नहीं हुआ, किन्तु बाद में अमीर खुसरो के समय में गायन में परिवर्तन तथा सितार के आविष्कार के कारण यह वाद्य प्रचलन में आया।[6] भारत देश के इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि हिन्दू शासन काल में यहाँ ध्रुपद-धमार गायन प्रचलित था, जिसकी संगत के लिए पखावज जैसे गंभीर एवं जोरदार वाद्य का प्रयोग किया जाता था, किन्तु जब भारत पर मुगलों का शासन हुआ, तब भारत की कला भी प्रभावित हुई, ध्रुपद-धमार का स्थान ख्याल, ठुमरी, कव्वाली ने ले लिया। इस नए प्रकार के गायन के लिए पखावज उपयुक्त नहीं था, अतः तबला नामक वाद्य का जन्म हुआ।[6] 11वीं शताब्दी में मुगलों ने भारत में स्थायी रूप से रहना शुरू कर दिया। वे यहीं के निवासी बन गए और फिर उन्होंने हर उस चीज़ पर अपना दावा करना शुरू कर दिया जो बेजोड़ और नायाब थी। इस तरह अमीर खुसरो और सिधार खां(डाढ़ी) का नाम तबला के आविष्कारकों की श्रेणी में आया।[5]

एक वर्ग हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के शिष्य और अलाउद्दीन खिलजी के दरबारी कवि हज़रत अमीर खुसरो को तबले का आविष्कारक मानता है।[4] आचार्य बृहस्पति ने रशीद मलिक की उर्दू पुस्तक 'हजरत अमीर खुसरो का इल्म-ए-मूसिकी और दूसरे मकालात' का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उन्हें इस बात के पुख्ता प्रमाण मिले हैं कि 11वीं सदी की शुरुआत में भारत में तबले का प्रचलन हो चुका था।[1] हजरत अमीर खुसरो के जन्म के सैकड़ों साल पहले से तबला भारत में मौजूद था। हजरत अमीर खुसरो का इसके आविष्कार से कोई संबंध नहीं है। आचार्य बृहस्पति के अनुसार यह मत सर्वप्रथम 'मादुनूल मूसिकी' नामक पुस्तक में मिलता है।[6] लेकिन अमीर खुसरो ने कहीं नहीं लिखा कि उन्होंने तबला बनाया। उन्होंने अपनी फ़ारसी पुस्तक 'इजाज़-ए खुसरवी' में तब्ल नामक एक वाद्य का उल्लेख किया है। आचार्य बृहस्पति के अनुसार 'तब्ल' एक फारसी शब्द है।[4] 'मादुनूल मूसिकी' के लेखक हकीम मोहम्मद करम इमाम ने तब्ल और तबला को दो अलग-अलग वाद्य माना है और उनका अलग-अलग वर्णन किया है। उनके अनुसार तब्ल का अर्थ ढोल होता है।[4] अमीर खुसरो को कुछ ताल जैसे असूल-ए-फाख्ता (सूलफाक्ता या सूलताल) और फरोदस्त आदि की रचना का श्रेय भी दिया जाता है, जो मूलतः पखावज के हैं।[4]

कुछ प्राचीन तबला वादकों का कहना है कि जब अलाउद्दीन खिलजी ने देवगीरी राज्य पर आक्रमण किया, तो उसने वहाँ के शासक को पराजित किया और धन-संपत्ति लूटकर देवगीरी के राजगायक गोपाल नायक और उनके सहयोगी मृदंग वादक को दिल्ली ले आए। संभवतः गोपाल नायक के सहयोगी मृदंग वादक ने मृदंग को बीच से काटकर उसे तबले का रूप दिया होगा और इसका श्रेय उन्हें नहीं बल्कि अलाउद्दीन खिलजी के दरबारी गायक अमीर खुसरो को मिला [6], जिनका काल 13वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर 14वीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक था। अमीर खुसरो ने अपनी किसी भी रचना में तबले का उल्लेख नहीं किया है। 18वीं शताब्दी से पहले की किसी भी रचना में तबले का उल्लेख नहीं है। इससे सिद्ध होता है कि तबला शब्द अमीर खुसरो के बाद ही प्रचलित हुआ।[6] प्रसिद्ध संगीतज्ञ ठाकुर जयदेव सिंह इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते कि तबले का आविष्कार अमीर खुसरो ने किया था। उनका कहना है कि अमीर खुसरो की पुस्तक में जहाँ भी तब्ल शब्द आया है, उसका अर्थ केवल ताल वाद्य है।[4] 'तबल' शब्द से तात्पर्य सभी अवनध वाद्यों से है, ऐसा केवल मुस्लिम देशों में हुआ है, भारत में नहीं।[4] 'तब्ल' और 'तबल' शब्दों का उल्लेख 14वीं शताब्दी से मिलने लगता है। जैन आचार्य सुधा कलश वाचनाचार्य ने 1350 में लिखी अपनी पुस्तक 'संगीतोपनिषत्सारोद्धार' में तबले और कुछ अन्य वाद्यों का उल्लेख मुसलमानों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले और पैदल चलने वाले वादकों द्वारा बजाए जाने वाले वाद्य के रूप में किया है।[4] 15वीं शताब्दी में प्रथम सिख गुरु नानक देव ने अपने एक वचन में 'तबल' का उल्लेख किया था। 19वीं शताब्दी के प्रसिद्ध

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

वैष्णव संत माधवदेव कंदली ने अपनी असमिया रामायण में तबल का उल्लेख किया है। प्रसिद्ध सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने 1521 में लिखे अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'पद्मावत' में तीन स्थानों पर तबल का उल्लेख किया है।[4]

बादशाह अकबर के शासनकाल 1556 से 1605 तक के 'आइन-ए-अकबरी' के अंग्रेजी अनुवाद में पृष्ठ संख्या 731 पर उस समय के ताल वाद्यों के नाम दिए गए हैं। यह केवल सात वाद्यों के नाम थे और इनमें तबले का नाम नहीं था। ऐसा लगता है कि तबला संगत उच्च श्रेणी की नहीं थी बल्कि निम्न श्रेणी के गायन, वादन और नृत्य के साथ प्रयोग की जाती होगी क्योंकि मियां तानसेन बादशाह अकबर के दरबार में ध्रुपद धमार गाया करते थे जिसके साथ पखावज की संगत को प्राथमिकता दी जाती है।[5] 18वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में जब सदारंग द्वारा रचित ख्याल गायन और खुसरो खां द्वारा निर्मित तीन तारों वाला सहतर(सितार) वाद्य दिन-प्रतिदिन अधिक लोकप्रिय होने लगा और पखावज की संगत इसके लिए अनुपयुक्त लगने लगी, तब उस्ताद सुधार खां ने उर्ध्वक और आलिंग्य की वादन शैली में सुधार किया जिसे तब तबल नाम दिया जा चुका था और इसे अपने शिष्यों को सिखाया।[4] सादिक अलि खां की पुस्तक 'सरमा-ए-इशरत' और चिरंजीत के अनुसार- पखावज वादक भगवान दास उर्फ भवानी दास और सुधार खां ढाढ़ी के बीच हुई प्रतियोगिता में पराजित पखावज वादक सुधार खां ने पखावज को बीच से दो टुकड़ों में काट दिया और ऊर्ध्वमुखी करके उस पर वादन किया। बीच से दो भागों में काट दिए जाने के बावजूद जब वे पखावज बोला तो लोगों की प्रतिक्रिया थी 'तब भी बोला'। इस नवनिर्मित वाद्य के लिए यही शब्द समय के साथ 'तब बोला', 'तबोला' और अंततः तबला के नाम से प्रचलित हुआ।[4] पंडित कृष्ण महाराज जी पखावज या मृदंग को दो भागों में काटकर तबला वाद्य की उत्पत्ति की धारणा को असंगत मानते हैं।[6]

जोड़ी को तबले का प्राचीन रूप माना जाता है।[9] जोड़ी बजाने की परंपरा 15वीं शताब्दी में सिख गुरुद्वारों में शुरू हुई थी। 15वीं शताब्दी के बाद, ख़याल गायन के प्रसार के साथ, कोमल 'चांटी' आधारित ताल वाद्य तबला ख़याल और अन्य श्रृंगारिक गायन के साथ संगत के लिए अभिजात वर्ग के संगीत में शामिल हो गया। धीरे-धीरे, यह विकसित हुआ और विभिन्न शैलियों के साथ इसकी लोकप्रियता बढ़ने लगी।[9] तबले में ढोलक समान मींडयुक्त बोल , मृदंग के खुले बोल और चांटी के बंद बोल बजाने में आसानी होने से , श्रृंगारिक गायन के साथ संगत के लिए तबला अधिक उपयुक्त माना जाने लगा।[9] जबकि कुछ का मानना है कि मोहम्मद शाह रंगीले के शासनकाल (लगभग 1700 ई.) के दौरान, उस्ताद सिधार खां डाढ़ी नामक एक प्रतिभाशाली व्यक्ति ने युग के बदलते स्वाद का गहन अध्ययन किया और तबला जैसे वाद्य यंत्रों के आकार और बनावट में कुछ बदलाव किए।[9] उन्होंने दाएं तबले के मुख पर मिट्टी की जगह लोह चूर्ण का मसाला और बाएं तबले पर आटे की जगह लोह चूर्ण का मसाला लगाया। इससे वादन और आवाज़ में बदलाव आया। उन्होंने नगाड़ा, ढोलक, मृदंग, पखावज, नृत्य और अन्य वाद्यों के बोलों को मिलाकर एक नई वादन शैली बनाई और तबला वादन का विकास किया।[5] पखावज तथा समकालीन लोकप्रिय ताल वाद्यों की वादन शैली से बोल-बंदिशें को आधार बनाकर उन्होंने अर्ध-पाणि (हाथों से तबला बजाने की एक विशेष तकनीक) तथा चांटी प्रधान बाज का आविष्कार किया, उंगलियों की स्थिति परिवर्तित की तथा उस पर अनेक बोल-बंदिशें रची तथा उन्हें अपने वंशजों तथा शिष्यों को सिखाया।[9] उनके द्वारा निर्मित तबला वादन की नई शैली दिल्ली घराना के नाम से प्रसिद्ध हुई।[5] सिधार खां द्वारा उठाए गए क्रांतिकारी कदम ने तबले के विकास की इतनी बड़ी परंपरा की नींव रखी कि आज यह संगीत की दुनिया में वर्चस्व के शिखर पर है।[9] आचार्य बृहस्पति के अनुसार तबले का आविष्कार 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में दिल्ली निवासी सुधार खां ने सितार की संगत के लिए किया था। उनके अनुसार, सुधार खां का असली नाम सत्तार खां था।[6] उन्हें सुधार नाम इसलिए मिला क्योंकि उन्होंने तबले में सुधार किया था। उनका असली नाम कुछ और था, सुधार खां उनका उपनाम था। उन्होंने पखावज वादक के साथ प्रतिस्पर्धा में तबले का आविष्कार किया।[6] 'सरमा-ए-इशरत' पुस्तक के अनुसार सिधार खां का काल 16वीं शताब्दी के आसपास था, लेकिन लाल मणि मिश्र और आचार्य बृहस्पति के अनुसार यह 19वीं शताब्दी के आसपास था।[6]

18वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भी विभिन्न क्षेत्रों में तबला जोड़ी बजाए जाने के चित्रण मिलते हैं। इसलिए, इन लोगों को तबले के आविष्कार का श्रेय देना सत्य और तथ्यात्मक नहीं है। इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर से पूर्व भी ध्रुपद गायन 'ध्रुव प्रबंध' के रूप में प्रचलित था, किन्तु उसे लोकप्रिय बनाने में उनके विशेष योगदान के कारण बाद में जनमानस में उन्हें ध्रुपद का आविष्कारक माना गया और उसी प्रकार तबला वादन को विकसित एवं लोकप्रिय बनाने में उनके विशेष योगदान के कारण यदि जनमानस में सुधार खां उपनाम वाले व्यक्ति का नाम भी तबले के आविष्कारक के रूप में प्रसिद्ध हो गया, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। खुसरो खां संभवतः सितार खां उपनाम से जाने जाते थे, जो बाद में बिगड़कर सिधार खां या सुधार खां हो गया।[6] कुछ लोग तबले के आविष्कारक के रूप में हुसैन खां उर्फ खब्बे हुसैन ढोलकिया का नाम भी लेते हैं।[4] कुछ लेखकों ने तबले को विदेशी वाद्य यंत्र के रूप में स्थापित करने का निरर्थक प्रयास भी किया है।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

उनके अनुसार यह अरेबियन , सुमेरियन, मेसोपोटेनियम या फारसी संस्कृति से संबंधित वाद्य यंत्र है ।[4] भगवत शरण शर्मा ने पश्चिमी लेखकों का हवाला देते हुए 'नबला' नामक एक वाद्य यंत्र का उल्लेख किया है जो प्राचीन काल में एशिया के आदिवासियों के बीच लोकप्रिय था और संभावना व्यक्त की कि तबला 'नबला' का ही बिगड़ा हुआ रूप हो सकता है ।[2] तबले का प्राचीन रूप भारत में मुसलमानों के आगमन से 1200-1300 वर्ष पूर्व से विद्यमान था । अतः यह कहना अनुचित है कि तबला मुसलमानों के साथ पश्चिम एशिया से भारत आया ।[4] पुणे के निकट भाजा गुफाओं में ईसा से 200 वर्ष पूर्व के एक प्रस्तार शिल्प में तबला सदृश वाद्य बजाए जाने का चित्रण है , जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि तबला एक प्राचीन वाद्य था, जिसे संभवतः मध्यकाल में पुनः खोजा गया या इसे मध्यकाल में प्रसिद्धि मिली ।[12] जिस कालखंड में यह दावा किया जा रहा है कि तबले का आविष्कार दिल्ली में हुआ, उस काल में देश के विभिन्न भागों में तबला भिन्न-भिन्न रूपों में बजाया जाता था । ये सभी धाराएँ एक-दूसरे से पृथक थीं ।[4]

निष्कर्ष

ऐतिहासिक तथ्यों पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि लगभग 11वीं शताब्दी से ही उत्तर भारत में राजनीतिक जीवन बाहरी आक्रमणों के कारण अस्त-व्यस्त हो गया था । इस प्रकार, जो राज्य बाहरी आक्रमणों से प्रभावित नहीं हुए, उनमें जिन कलाकारों को राजसी संरक्षण प्राप्त हुआ, उनके कला रूप या मूल कला परंपराएं सुरक्षित रहीं और वे अभिजात संगीत का भी हिस्सा बन गए तथा जिन कलाकारों को राजसी संरक्षण नहीं मिला, उनके कला रूप धीरे-धीरे अभिजात संस्कृति से अलग होकर लोक कलाओं में विलीन हो गए । इसलिए संगीत के ऐसे अनेक वाद्यों का अंकन परवर्ती काल के राज्याश्रय में निर्मित मूर्ति, वास्तु या चित्रों में नहीं दिखाई देता जो की प्राचीन युग में एक समय उन्नत और अभिजात संगीत के अंग थे । लेकिन बाद में उनका प्रचार-प्रसार केवल लोक संगीत की परंपराओं तक ही सीमित रह गया ।[6] जनरुचि के अनुसार इनमें से कुछ वाद्य समय-समय पर प्रचलन में रहे और लोकप्रिय भी हुए । तदनुसार, वे अभिजात संगीत या लोक संगीत का भी हिस्सा बन गए । उदाहरण के लिए, प्राचीन ताल वाद्य 'हुडुक्का' वर्तमान समय में 'कहारों' द्वारा बजाया जाने वाला लोक वाद्य बन गया है । इसी प्रकार, मध्यकालीन राज दरबारों में बजाया जाने वाला 'ढोलक' भी वर्तमान युग में लोक संगीत या सुगम संगीत का एक वाद्य मात्र बन गया है । संभवतः यही कारण है कि लगभग 14वीं से 16वीं शताब्दी तक जोड़े में बजाए जाने वाले ताल वाद्य के प्रति जनरुचि की उदासीनता के कारण उस वाद्य का प्रयोग बहुत कम हो गया था, अतः उस समय की अभिजात मूर्तियों में उसका चित्रण बहुत कम मिलता है ।[6] प्राचीन काल में सामाजिक उत्सवों में तबला जैसे वाद्यों का वादन किसी न किसी रूप में किया जाता था । इसीलिए उस समय के कलाकारों ने इसे चित्रित किया और मूर्तियों में उकेरा । इससे स्पष्ट है कि तबला भारत की प्राचीन वस्तु है । भारत में तबले का केवल नाम और उसकी संगत का क्षेत्र बदला गया है । तबला जो कभी उर्ध्वक और आलिंग्य नामों से मार्गीय संगीत (शास्त्रीय संगीत) का गौरव था, कालांतर में तबला आदि नामों से देसी संगीत (लोक संगीत) से जुड़ गया और फिर पुनः शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में प्रसिद्ध हो गया, लेकिन यह अभी भी लोक संगीत से जुड़ा हुआ है ।[4] यद्यपि यह संभावना हो सकती है कि प्राचीन समय की वादन तकनीक मध्यकालीन और आधुनिक काल की वादन तकनीक से भिन्न हो ।

संदर्भ

1. बृहस्पति, आचार्या, 1976, संगीत चिंतामणि, संगीत कार्यालय
2. शर्मा, भगवत शरण 1978, ताल प्रकाश, संगीत कार्यालय, हाथरस
3. मिस्त्री, डॉ. आबान ई. 1999, पखावज और तबला के घरानें एवं परम्परायें, पं. केकी एस जिजिना
4. मिश्रा, पं. विजयशंकर 2005, तबला पुराण, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स ।
5. मिश्रा, पं. छोटेलाल 2006, ताल प्रबंध, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स
6. गुप्ता, निशी, 2010, ताल शास्त्र का सैध्दान्तिक पक्ष, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स
7. कुमार, अजय, 2010, पखावज की उत्पत्ति विकास एवं वादन शैलियाँ, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स
8. कुमार, पं. महेश 2014, तबला वादन, वाग्देवी प्रकाशन
9. सरल, डॉ. भीमसेन 2014, तबला संगत एवं कलाकार, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स
10. Popley, H. A. (1921). The music of India. Association Press.
11. Roda, P. A. (2015). The tabla past and present: Analysis of materials in India's most iconic drums. The Galpin Society Journa1, 68, 193-186.
12. Tarlekar, G. H., & Tarlekar, N. (1972). Musical instruments in Indian sculpture. Pune: Pune Vidyarthi Griha Prakashan.